

श्रीगुरुमाई के वचनों पर ध्यान

ईशा सरदेसाई द्वारा लिखित

“जो पुराना है, वह सोना है”

जैसाकि आपमें से बहुत-से लोग जानते ही हैं कि एक तरीका जिससे गुरुमाई जी अपनी सिखावनियाँ प्रदान करती हैं वह है, आकस्मिक-सी प्रतीत होने वाली बातचीत जो वे लोगों से करती हैं और लोग उनसे करते हैं। यह बातचीत अकसर हल्की-फुल्की, मज़ेदार और बहुत प्यारभरी होती है। फिर भी, उसके महत्व को कम नहीं आँका जा सकता। जैसे कि मैंने कई सिद्धयोगियों को यह कहते हुए सुना है कि गुरुमाई जी के सान्निध्य में *हरेक* क्षण, उनसे सिखावनियाँ प्राप्त होने का क्षण होता है।

मकर संक्रान्ति पर हुए सत्संग के दौरान गुरुमाई जी ने हाल में हुई ऐसी ही एक बातचीत के बारे में बताया। गुरुमाई जी को किसी ने बताया कि वे देख रहे हैं कि बहुत-से लोग वृद्ध हो चले हैं। यह याद करते हुए गुरुमाई जी मुस्कुराई कि उन्हें यह बात बहुत *दिलचस्प* लगी कि वह व्यक्ति *उनसे* यह कह रहा था। जैसा गुरुमाई जी ने कहा कि उनका जन्म भी कई दशकों पहले हुआ था!

फिर गुरुमाई जी ने जो सिखावनी प्रदान की, वह मेरे लिए बहुत अर्थपूर्ण थी। उन्होंने कहा, “युवाओं को वृद्धों के बारे में चिन्ता क्यों करनी चाहिए? वृद्धजन यह चिन्ता क्यों करें कि उनकी उम्र होती जा रही है?”

मुझे यह सिखावनी एक कोआन जैसी लग रही है। [कोआन बौद्ध धर्म में उपयोग की जाने वाली पहेली या प्रश्न होता है जिसे तर्क द्वारा समझना मुश्किल होता है और जिसका उपयोग ध्यान या आत्मचिन्तन हेतु किया जाता है।] एक ओर तो ऐसी चिन्ता का मतलब ही क्या है? क्या यह उचित है? दूसरी ओर, युवाओं का यह उत्तरदायित्व है *ही* कि वे उनका ध्यान रखें जो उम्रदराज़ हो रहे हैं। इसके साथ ही, पुरानी पीढ़ियों का यह उत्तरदायित्व है कि वे उम्र में अपने से छोटे लोगों के साथ अपना ज्ञान साझा करें। यह आपसी आदान-प्रदान हमारे मानव-समाज में, हमारी बनाई हुई सामाजिक व्यवस्था में रचा-बसा है। मुझे विश्वास है कि गुरुमाई जी अपनी सिखावनी द्वारा यही बता रही थीं : कि पीढ़ियों के बीच देखभाल करने का एक चक्र होता है जिसे निरन्तर आगे बढ़ाते रहना चाहिए, जिसे सशक्त करते रहना चाहिए।

गुरुमाई जी का यही तात्पर्य था, मेरे इस विश्वास का एक कारण यह है कि मैंने अनगिनत वृत्तान्त सुने हैं जिनमें गुरुमाई जी ने अनेक प्रयास कर इस बात को प्रोत्साहन दिया है कि युवा और वृद्धजन एक-साथ आएँ। इसका एक उदाहरण देती हूँ : गुरुमाई जी के कहने पर, और उनके मार्गदर्शन व निर्देशानुसार, वर्ष १९९९ की ग्रीष्म-ऋतु में श्री मुक्तानन्द आश्रम में, दस 'इण्टरजेनरेशनल साधना सत्संग' [पीढ़ियों के बीच साधना सत्संग] आयोजित किए गए थे। इन सत्संगों में प्रतिभागियों ने सिद्धयोग साधना के बारे में अपने दृष्टिकोण व अनुभव एक-दूसरे को बताए। किशोर-युवाओं को यह अवसर मिला था कि वे अपने बड़े-बुजुर्गों के उस ज्ञान से सीखें जो उन्होंने इतने सालों में संचित किया है। युवाओं के जोश और नए विचारों ने बुजुर्गों को प्रेरित व उत्साहित किया। इन सत्संगों में शामिल सभी लोगों को बहुत मज़ा आया—यह वास्तव में एक “win-win” [विन-विन] यानी सभी के लिए लाभप्रद स्थिति थी!

अपने से बड़ों की तुलना में मैं अभी काफी छोटी हूँ और पिछली पीढ़ियों के सिद्धयोगियों ने जो ज्ञान मेरे साथ साझा किया है, उससे मैं बहुत लाभान्वित हुई हूँ, इसलिए गुरुमाई जी के शब्द मेरे लिए एक प्रोत्साहन भी थे कि मैं इन वृद्धजनों की सराहना करूँ, उन्हें धन्यवाद दूँ। गुरुमाई जी ने अंग्रेज़ी की एक कहावत “Old is gold” [ओल्ड इज़ गोल्ड] का ज़िक्र किया जिसका अर्थ है 'जो पुराना है, वह स्वर्ण है।' उन्होंने कहा कि उन्हें यह सिद्धान्त पसन्द है—और फिर उन्होंने यह कहा कि सूर्य भी बहुत पुराना है। इसे सुनकर मेरे अन्दर सच में एक विचार-प्रक्रिया आरम्भ हुई। मैंने खुद से कहा, “अरे! सूर्य तो लगभग ४.५७ अरब वर्ष पुराना है! और जब से हमारे ग्रह पर जीवन आरम्भ हुआ है, सूर्य का प्रकाश उसे पोषित करता आया है।”

यह एक सुन्दर छवि है जो मेरे मन में तब उभरकर आती है जब मैं इस बात पर विचार करूँ कि पिछली पीढ़ियों ने हमारे लिए कितना कुछ किया है! यह मेरा सौभाग्य रहा है कि मुझे अपने से बीस, तीस, चालीस, और यहाँ तक कि पचास वर्ष बड़े लोगों के साथ सेवा व साधना करने का अवसर मिला है। सिद्धयोग मिशन के प्रति उनके इतने बड़े योगदान को देखकर मेरा मन उनके प्रति आदरभाव और विनम्रता से भर जाता है। इस असाधारण मिशन के लिए अपना कौशल अर्पित कर, मैं जो भी कर पा रही हूँ, वह इसलिए, क्योंकि उन्होंने इसके लिए एक आधार तैयार किया है, क्योंकि उन्होंने प्रतिबद्ध रहकर, वर्षों तक बाबा मुक्तानन्द और गुरुमाई जी की सेवा की है। और इस पूरे समय के दौरान उनकी साधना और परिपक्व ही हुई है। उनका प्रज्ञान और निखरता ही गया है, और भी अनमोल होता गया है, साथ ही उन्होंने बड़े उदार हृदय से वह प्रज्ञान मेरे व अन्य युवा सिद्धयोगियों के साथ साझा किया है।

मैं आशा करती हूँ कि सिद्धयोग पथ पर चल रहे किशोर व युवा अपने से बड़ों में उस जीवन को देखें जो उन्होंने जिया है, उनकी समस्त उपलब्धियों को देखें, उन्होंने इस संसार को जो दिया है, उसे देखें। और मेरा विचार है कि अपनी ओर से, ये बड़े-बुजुर्ग किशोर-युवाओं को प्रेरित करते रहें, ताकि युवाओं की समझ विकसित हो। बुजुर्गों के पास देने के लिए जो है और देने का उनका जो *उत्तरदायित्व* है, वह अमूल्य है। आपमें चाहे कितनी भी बुद्धिमत्ता हो, कितना भी कौशल हो, या असामान्य परिपक्वता हो—इनमें से कुछ भी *समय* का स्थान नहीं ले सकता, अर्थात् इस पृथ्वी पर जिए आपके वर्षों के जीवन के समृद्ध अनुभव की जगह नहीं ले सकता।

उम्र के विषय में गुरुमाई जी के ये वचन भी मेरे दिल को छू गए कि जब तक शरीर युवा है तब तक हमें बड़ी प्रबलता से, उत्साहपूर्वक साधना करनी चाहिए। गुरुमाई जी ने इस बारे में बात की कि हमें यह दृढ़ बोध बनाए रखना चाहिए कि साधना के लिए हमारा शरीर कितना महत्वपूर्ण है। 'शरीरभाव के परे' से जुड़ी वे तथाकथित अनुभूतियाँ जिन्हें हम दूसरों से सुनते हैं, बड़ी लुभावनी लग सकती हैं—परन्तु जैसाकि मैंने पहले लिखा है कि अपने इस शरीर *द्वारा ही*, इस मन *द्वारा ही*, इस श्वास और प्रश्वास *द्वारा ही* हम आध्यात्मिक पथ पर स्थायी उन्नति कर सकते हैं। गुरुमाई जी ने कहा है कि जब तक हम शरीर की देखभाल करने का प्रयत्न करते रहेंगे, शरीर हमारी साधना के लिए हमें सर्वश्रेष्ठ सम्बल देता रहेगा।

जब हम युवा होते हैं तब अपने शारीरिक स्वास्थ्य को और अपने मन की चुस्ती-फुर्ती के महत्व को अकसर हल्के में लेना आसान हो सकता है। यह सोचकर हम खुद को धोखा दे सकते हैं कि हम हमेशा ऐसा ही महसूस करते रहेंगे और वह भी बस इसलिए क्योंकि इस बात से कोई अलग सच्चाई हमारी वर्तमान कल्पना से या हमारे अनुभव से अभी दूर है। परन्तु एक नई सच्चाई का सामना होने तक रुकना ही क्यों? है न? तो सबसे अच्छी चीज़ जो हम कर सकते हैं, वह यह कि हमारा शरीर, हमारी इन्द्रियाँ, हमारा मन, हमारी कार्यक्षमता अभी जैसी है, हम उसका सदुपयोग करें। हमारे पास जो ऊर्जा और प्राणशक्ति है, उसका हम उपयोग कर सकते हैं और उसे अपनी साधना में लगा सकते हैं।

हालाँकि गुरुमाई जी ने विशेष तौर पर यह बताया है कि जब हमारा *शरीर युवा* है तब हमें क्या करना चाहिए, फिर भी मुझे लगता है कि यह सिखावनी और भी विस्तृत अर्थ में लागू होती है। सच तो यह है कि आज हमारी उम्र जो है, वैसी वह कभी नहीं रहेगी। हमारी उम्र केवल बढ़ेगी ही—और न जाने हमारी उम्र और कितनी होगी या आने वाले वर्षों में भाग्य अथवा परिस्थितियाँ हमारे लिए कौन-से बदलाव लाएँगी। इसलिए हमेशा ही, साधना करने का सबसे उपयुक्त समय है, 'अभी'।

‘अभी’। यह कितना सरल-सा शब्द है। कितना सादा-सा। बस दो अक्षर। फिर भी दो अक्षरों के इस शब्द के गर्भ में एक अनकहा वादा समाया हुआ है। यह सम्भावना से झिलमिला रहा है, इसमें किसी महान चीज़ का, किसी देदीप्यमान चीज़ का कोमल जगमगाता-सा स्वर है, एक ऐसा अस्फुट स्वर जो कह रहा है कि इसमें कुछ ऐसा दिव्य है जो प्रकट होने के लिए आतुर है। और वह दिव्य चीज़ प्रकट ‘होगी’ या नहीं, यह हम पर निर्भर है—यह इस बात पर निर्भर है कि हम इस क्षण का, इस ‘अभी’ का पूरा-पूरा लाभ उठाते हैं या नहीं।

‘सटीक पल की प्रतीक्षा में,’^१ शीर्षक के अन्तर्गत अपनी कविता में गुरुमाई जी इसी विषय में बताती हैं। क्या आप उस कविता को दोबारा पढ़ना नहीं चाहेंगे?



© २०२६ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

^१ <https://www.siddhayoga.org/teachings/gurumayis-teachings-for-2018/waiting-for-that-perfect-moment/>